Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with International Impact Factor 8.357
Peer Reviewed Journal
https://doi.org/10.69758/GIMRJ/2601S01V14P025

e-ISSN No. 2394-8426
Special Issue on Humanities And
Indian Knowledge System Feb'26
Issue–I(I), Volume–XIV

भारतीय ज्ञान प्रणालियाँ और सामाजिक कार्य: शिक्षा एवं व्यवहार में समावेशन की चुनौतियाँ

डॉ.दिपक उईके
असोसिएट प्रोफेसर
अनिकेत कॉलेज ऑफ सामाजिक कार्य, वर्धा
E-mail: uikeydipak196@gmail.com

सारांश- यह शोध पत्र सामाजिक कार्य शिक्षा एवं व्यावहारिक सामाजिक कार्य)Social Work Practice) में भारतीय ज्ञान प्रणालियों)Indian Knowledge Systems– IKS) को समुचित रूप से अपनाने में आने वाली वैचारिक, संरचनात्मक, शैक्षणिक तथा नीतिगत बाधाओं का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। भारतीय ज्ञान प्रणालियाँ- जिनमें वेद, उपनिषद, भगवद्गीता, बौद्ध दर्शन, जैन चिंतन, लोकज्ञान, आदिवासी परंपराएँ, ग्राम स्वराज की अवधारणा तथा सेवा, करुणा, सहअस्तित्व और समग्र कल्याण जैसे मूल्य निहित हैं- सामाजिक कार्य के मूल उद्देश्यों से गहराई से जुड़ी हुई हैं। इसके बावजूद, सामाजिक कार्य शिक्षा में प्रायः पश्चिमी सिद्धांतों, मॉडल्स और पद्धतियों का वर्चस्व देखने को मिलता है, जिससे स्वदेशी ज्ञान की उपेक्षा होती है।

सारांश में यह रेखांकित किया गया है कि सामाजिक कार्य पाठ्यक्रमों का उपनिवेशिक प्रभाव, भारतीय ज्ञान प्रणालियों की वैज्ञानिकता को लेकर संदेह, प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी, पाठ्यपुस्तकों और संदर्भ सामग्री का अभाव, तथा मूल्यांकन प्रणालियों का पश्चिमकेंद्रित होना प्रमुख बाधाएँ हैं। इसके अतिरिक्त-, आधुनिकता और वैश्वीकरण के प्रभाव में स्वदेशी ज्ञान को परंपरागत, अवैज्ञानिक या अप्रासंगिक मान लेने की प्रवृत्ति भी इसके समावेशन में अवरोध उत्पन्न करती है।

अभ्यास के स्तर पर भारतीय ज्ञान प्रणालियों से जुड़ी सामुदायिक सहभागिता, लोकआधारित हस्तक्षेप-, नैतिक आध्यात्मिक मूल्यों और समग्र दृष्टिकोण को अपनाने में संस्थागत समर्थन की कमी, नीतिगत अस्पष्टता तथा पेशेवर मानकीकरण की चुनौती प्रमुख रूप से उभरती है। यह शोध यह भी स्पष्ट करता है कि सामाजिक कार्य में भारतीय ज्ञान प्रणालियों का समावेश केवल सांस्कृतिक पुनरुद्धार का प्रयास नहीं, बल्कि स्थानीय संदर्भों में अधिक प्रभावी, संवेदनशील और टिकाऊ हस्तक्षेप विकसित करने की आवश्यकता है। सामाजिक कार्य अध्ययन और अभ्यास में भारतीय ज्ञान की स्वीकृति और एकीकरण में आने वाली मुख्य बाधाओं की जाँच करता है। यह तर्क देता है कि ज्ञानमीमांसीय पूर्वाग्रह, औपनिवेशिक विरासत, संस्थागत संरचनाएँ, दस्तावेज़ीकरण की कमी और पेशेवर सत्यापन की चुनौतियाँ स्वदेशी दृष्टिकोणों को सार्थक रूप से शामिल करने में बाधा डालती हैं। यह पेपर ज्ञानमीमांसीय बहुलवाद और पाठ्यक्रम सुधार की आवश्यकता पर ज़ोर देते हुए निष्कर्ष निकालता है ताकि सामाजिक कार्य शिक्षा को अधिक सांस्कृतिक रूप से उत्तरदायी और सामाजिक रूप से प्रासंगिक बनाया जा सके।

अंततः, यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि सामाजिक कार्य शिक्षा और अभ्यास में भारतीय ज्ञान प्रणालियों को स्वीकार करने के लिए पाठ्यक्रम सुधार, शिक्षक प्रशिक्षण, शोध एवं दस्तावेजीकरण, तथा नीति-स्तर पर समर्थन आवश्यक है। इससे सामाजिक कार्य एक अधिक समावेशी, मूल्यआधारित और भारतीय - सामाजिक यथार्थ से जुड़ा हुआ अनुशासन बन सकता है।

मुख्य शब्द- भारतीय ज्ञान प्रणालियाँ, सामाजिक कार्य शिक्षा, अभ्यास, स्वदेशी ज्ञान, पाठ्यक्रम बाधाएँ, औपनिवेशिक प्रभाव, सामुदायिक विकास, मूल्यआधारित सामाजिक कार्य।-

परिचय -भारत में एक औपचारिक डिसिप्लिन के तौर पर सामाजिक कार्य को औपनिवेशिक काल के दौरान पेश किया गया था और यह काफी हद तक पश्चिमी सैद्धांतिक बुनियादों पर विकसित हुआ। हालांकि भारतीय समाज में सामुदायिक देखभाल, आपसी मदद, आध्यात्मिक सलाह और सामाजिक सुधार की एक समृद्ध विरासत है, लेकिन इन स्वदेशी प्रथाओं को मुख्यधारा की सामाजिक कार्य शिक्षा और अभ्यास में वैध ज्ञान के रूप में पर्याप्त रूप से मान्यता नहीं मिली है।

भारतीय ज्ञान प्रणालियों में दार्शनिक परंपराएं जैसे धर्म), कर्म और अहिंसा(, सामुदायिक संस्थाएं जैसे) (पंचायतें और स्वयं सहायता समूह, और परिवार, जाति, जनजाति और धार्मिक समुदायों में निहित स्वदेशी मदद करने की प्रथाएं शामिल हैं। हालांकि, कई संरचनात्मक और वैचारिक बाधाओं के कारण उनकी स्वीकृति सीमित बनी हुई है।

) सामाजिक कार्यSocial Work) एक ऐसा व्यावहारिक एवं मूल्यआधारित अनुशासन है जिसका मूल - उद्देश्य व्यक्ति, समूह और समुदाय के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा नैतिक विकास को सुनिश्चित करना

है। सामाजिक कार्य शिक्षा का लक्ष्य केवल तकनीकी दक्षता विकसित करना नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, समानता, करुणा, सेवा और मानवीय गरिमा जैसे मूल्यों का संवर्धन करना भी है। भारतीय संदर्भ में ये मूल्य कोई नवीन अवधारणा नहीं हैं, बल्कि भारतीय ज्ञान प्रणालियों में सहस्राब्दियों से निहित रहे हैं। वेद, उपनिषद, स्मृतियाँ, बौद्ध–जैन दर्शन, भक्ति परंपरा, लोकज्ञान, ग्राम स्वराज और आदिवासी जीवनदृष्टि सभी में सामाजिक - उत्तरदायित्व और सामुदायिक कल्याण की स्पष्ट चेतना मिलती है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में"वसुधैव कुटुम्बकम्" की अवधारणा सामाजिक समरसता और वैश्विक मानवता का संदेश देती है। महाभारत में सेवा और दान को सामाजिक कर्तव्य माना गया है, जबकि भगवद्गीता में निष्काम कर्म की अवधारणा समाज कल्याण के नैतिक आधार को स्पष्ट करती है। राधाकृष्णन के अनुसार, "भारतीय दर्शन का मूल उद्देश्य मानव को केवल व्यक्तिगत मुक्ति की ओर नहीं, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व की ओर भी प्रेरित करना है"[i]। यह दृष्टि सामाजिक कार्य के मूल दर्शन से गहरे स्तर पर मेल खाती है। इसके बावजूद भारत में सामाजिक कार्य शिक्षा का संस्थानीकरण मुख्यतः औपनिवेशिक काल में हुआ, जब पश्चिमी सामाजिक कार्य सिद्धांतों और मॉडल्स को ही 'वैज्ञानिक' और 'मानक' माना गया। देशपांडे लिखते हैं कि "भारतीय सामाजिक कार्य शिक्षा की संरचना में पश्चिमी अनुभवों और अवधारणाओं का प्रभुत्व रहा है, जिसके कारण स्वदेशी सामाजिक चिंतन को हाशिए पर डाल दिया गया"[ii]। परिणामस्वरूप, भारतीय ज्ञान प्रणालियाँ सामाजिक कार्य के पाठ्यक्रम और अभ्यास में अपेक्षित स्थान नहीं बना सकीं। सामाजिक कार्य शिक्षा में भारतीय ज्ञान प्रणालियों को स्वीकार न किए जाने की एक प्रमुख बाधा यह धारणा है कि स्वदेशी ज्ञान परंपरागत, दार्शनिक या आध्यात्मिक है और आधुनिक वैज्ञानिक सामाजिक कार्य के लिए अनुपयुक्त है। योगेन्द्र सिंह का मत है कि "औपनिवेशिक ज्ञान संरचना ने भारतीय समाज विज्ञानों में आत्महीनता की स्थिति उत्पन्न की जहाँ स्वदेशी ज्ञान को कमतर आँका गया"[iii]। यह मानसिकता सामाजिक कार्य शिक्षा में भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

अभ्यास के स्तर पर भी सामाजिक कार्य में पश्चिमी हस्तक्षेप मॉडल्स को प्राथमिकता दी जाती है, जबकि भारतीय समाज की सामुदायिक संरचना, परिवारकेंद्रित जीवन-, लोकसंस्कृति और आध्यात्मिक मूल्यों की अनदेखी होती है। महात्मा गांधी का ग्राम स्वराज का विचार जिसमें आत्मनिर्भरता, सहभागिता और नैतिकता पर बल दिया गया है-समुदायआधारित सामाजिक कार्य के लिए अत्यंत प्रासंगिक है। गांधी जी लिखते हैं-, "सच्चा स्वराज नीचे से ऊपर की ओर विकसित होता है, जहाँ प्रत्येक गाँव आत्मनिर्भर इकाई होता है"[iv]। इसके बावजूद, सामाजिक कार्य अभ्यास में इस दृष्टिकोण का सीमित उपयोग दिखाई देता है।

इस संदर्भ में यह शोध पत्र सामाजिक कार्य शिक्षा और अभ्यास में भारतीय ज्ञान प्रणालियों को स्वीकार करने में आने वाली वैचारिक, शैक्षणिक, संस्थागत और नीतिगत बाधाओं का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। साथ ही यह स्पष्ट करने का प्रयास करता है कि भारतीय ज्ञान प्रणालियों का समावेश सामाजिक कार्य को अधिक संदर्भ-संवेदी, सांस्कृतिक रूप से प्रासंगिक और नैतिक रूप से सुदृढ़ बना सकता है। वर्तमान समय में, जब सामाजिक असमानता, सांस्कृतिक विस्थापन और सामुदायिक विघटन जैसी समस्याएँ गहराती जा रही हैं, तब सामाजिक कार्य शिक्षा में भारतीय ज्ञान प्रणालियों की पुनर्स्थापना एक आवश्यक बौद्धिक और व्यावहारिक पहल के रूप में उभरती है।

सामाजिक कार्य में भारतीय ज्ञान की अवधारणा -

भारतीय ज्ञान की अवधारणा सामाजिक कार्य के संदर्भ में एक समग्र, मूल्य आधारित और सांस्कृतिक-रूप से अंतर्निहित दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती है। भारतीय ज्ञान परंपरा में समाज को केवल संरचनात्मक इकाइयों का समूह नहीं, बल्कि एक जीवंत नैतिक सांस्कृतिक तंत्र माना गया है, जहाँ व्यक्ति, परिवार, समुदाय और प्रकृति परस्पर आश्रित हैं। यही अंतर्संबंध समाज कार्य की मूल भावना सेवा, करुणा, सहअस्तित्व और सामाजिक न्याय को स्पष्ट रूप से परिभाषित करता है। भारतीय दर्शन में ऋण की अवधारणा ऋण-देव), ऋषिऋण-, पितृऋण - व्यक्ति को समाज के प्रति उत्तरदायी बनाती है। मनुस्मृति में कहा गया है कि मनुष्य का जीवन (ऋण-और मनुष्य केवल अपनेलिए नहीं, बल्कि समाज के कल्याण हेतु है। इस संदर्भ में लिखा गया है- "'सर्वभूतहिते रताः' अर्थात जो सभी प्राणियों के हित में रत है, वही श्रेष्ठ आचरण का अधिकारी है"[v]। यह विचार समाज कार्य के नैतिक आधार को सुदृढ़ करता है। उपनिषदों में व्यक्त "'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना समाज कार्य को वैश्विक मानवीयता से जोड़ती है। महोपनिषद में वर्णित है कि संकीर्ण सोच वाले लोग ही 'अपना-पराया' देखते हैं, जबकि उदार चरित्र वाले सम्पूर्ण विश्व को परिवार मानते हैं"[vi] यह अवधारणा समाज कार्य के समावेशन)Inclusion) और सार्वभौमिक मानवाधिकार के सिद्धांतों के अनुरूप है।

भगवद्गीता में प्रतिपादित निष्काम कर्म का सिद्धांत समाज कार्य अभ्यास की नैतिकता को स्पष्ट करता है। गीता में कहा गया है- "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" (गीता 2.47), अर्थात व्यक्ति को फल की

अपेक्षा किए बिना कर्म करना चाहिए। राधाकृष्णन के अनुसार, "निष्काम कर्म सामाजिक सेवा को स्वार्थ से मुक्त कर उसे नैतिक उत्तरदायित्व में रूपांतरित करता है"[vii] । यह दृष्टि पेशेवर सामाजिक कार्य में सेवा भाव को केंद्र में रखती है। बौद्ध दर्शन में करुणा और मैत्री की अवधारणाएँ समाज कार्य के मनोसामाजिक हस्तक्षेपों का आधार प्रस्तुत करती हैं। धम्मपद में कहा गया है—"सब्बे सत्ता सुखिता भवन्तु"[viii] अर्थात सभी प्राणी सुखी हों । यह विचार समाज कार्य के कल्याणकारी और अहिंसक दृष्टिकोण को सशक्त करता है। आधुनिक भारतीय चिंतकों में महात्मा गांधी का समाज दर्शन समाज कार्य में भारतीय ज्ञान की व्यावहारिक अभिव्यक्ति है। गांधी का ग्राम स्वराज समुदायआधारित-, आत्मनिर्भर और सहभागी विकास की अवधारणा प्रस्तुत करता है। गांधी लिखते हैं, "गाँवों की उन्नति के बिना भारत की उन्नति की कल्पना नहीं की जा सकती"[ix]। यह विचार सामुदायिक समाज कार्य और सहभागी विकास के सिद्धांतों से सीधा जुड़ता है। सामाजिक कार्य में भारतीय ज्ञान की अवधारणा केवल दार्शनिक या सांस्कृतिक विमर्श तक सीमित नहीं है, बल्कि यह समाज कार्य शिक्षा और अभ्यास के लिए एक सुदृढ़ वैचारिक एवं नैतिक आधार प्रदान करती है। भारतीय ज्ञान परंपरा सामाजिक कार्य को स्थानीय संदर्भों से जोड़कर उसे अधिक संवेदनशील, मानवीय और टिकाऊ बनाने की क्षमता रखती है।

भारतीय ज्ञान प्रणाली को स्वीकार करने में प्रमुख बाधाएँ-

भारतीय ज्ञान प्रणाली)Indian Knowledge Systems–IKS) भारत की बहुआयामी दार्शनिक, वैज्ञानिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं का समेकित रूप है। इसमें वैदिक–उपनिषदिक चिंतन, बौद्ध–जैन दर्शन, लोकज्ञान, जनजातीय ज्ञान, आयुर्वेद, योग, ग्राम स्वराज, तथा सामुदायिक जीवनदृष्टि सम्मिलित है। इसके - व्यापक और समृद्ध स्वरूप के बावजूद, आधुनिक शिक्षा, समाज विज्ञानों तथा विशेषतः सामाजिक कार्य जैसे व्यावहारिक अनुशासनों में भारतीय ज्ञान प्रणाली को स्वीकार करने में अनेक बाधाएँ सामने आती हैं। इन बाधाओं को वैचारिक, संरचनात्मक, शैक्षणिक और नीतिगत स्तरों पर समझा जा सकता है।

1. औपनिवेशिक ज्ञान संरचना का प्रभाव-

भारतीय शिक्षा प्रणाली की संरचना औपनिवेशिक काल में विकसित हुई, जिसमें पश्चिमी ज्ञान को 'वैज्ञानिक' और 'आधुनिक' माना गया तथा भारतीय ज्ञान को परंपरागत या अवैज्ञानिक के रूप में प्रस्तुत किया गया। मैकॉले की शिक्षा नीति ने भारतीय ज्ञान परंपराओं को हाशिए पर डाल दिया। योगेन्द्र सिंह का मत है कि "औपनिवेशिक ज्ञान व्यवस्था ने भारतीय समाज विज्ञानों में आत्मविस्मृति और बौद्धिक पराधीनता को जन्म दिया"[x]। यह प्रभाव आज भी पाठ्यक्रमों और शोध पद्धतियों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

2. भारतीय ज्ञान की वैज्ञानिकता पर संदेह -एक प्रमुख बाधा यह धारणा है कि भारतीय ज्ञान प्रणाली आध्यात्मिक या दार्शनिक है, इसलिए वह आधुनिक विज्ञान और पेशेवर अभ्यास के लिए अनुपयुक्त है। बी .एन. पांडे के अनुसार"भारतीय ज्ञान को तर्क और अनुभव की कसौटी पर परखे बिना ही उसे अवैज्ञानिक मान लेना आधुनिक शिक्षा की सबसे बड़ी विडंबना है"[xi]। यह सोच सामाजिक कार्य, शिक्षा और नीति निर्माण में इसके समावेशन को सीमित कर देती है।

3. पाठ्यक्रम और संदर्भ सामग्री का अभाव- भारतीय ज्ञान प्रणाली से संबंधित समकालीन, अनुशासन-आधारित और व्यावहारिक पाठ्यपुस्तकों की कमी भी एक गंभीर बाधा है। अधिकांश पाठ्यक्रम पश्चिमी लेखकों और मॉडल्स पर आधारित हैं। देशपांडे लिखते हैं कि "भारतीय विश्वविद्यालयों में स्वदेशी ज्ञान पर आधारित पाठ्य सामग्री का अभाव इसे अकादमिक हाशिए पर बनाए रखता है"[xii]।

4. प्रशिक्षित शिक्षकों और शोधकर्ताओं की कमी -भारतीय ज्ञान प्रणाली को पढ़ाने और शोध में उपयोग करने हेतु प्रशिक्षित शिक्षकों और शोधकर्ताओं का अभाव भी एक बड़ी समस्या है। पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक अकादमिक प्रशिक्षण के बीच संवाद की कमी बनी हुई है। कपिला वात्स्यायन के अनुसार "भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिक शिक्षा के बीच सेतु का अभाव इसके समावेशन में सबसे बड़ा अवरोध है"[xiii]।

5. वैश्वीकरण और पश्चिमी मॉडल्स का वर्चस्व -वैश्वीकरण के दौर में अंतरराष्ट्रीय मान्यता, रैंकिंग और पेशेवर मानकों के नाम पर पश्चिमी सिद्धांतों को प्राथमिकता दी जाती है। इससे भारतीय ज्ञान प्रणाली को 'स्थानीय' या 'अप्रासंगिक' मान लिया जाता है। अमर्त्य सेन का कहना है कि "विकास की बहस में स्थानीय ज्ञान की उपेक्षा सामाजिक नीतियों को संदर्भविहीन बना देती है-"[xiv]।

6. नीति -स्तर पर अस्पष्टता और सीमित समर्थन-हालाँकि हाल के वर्षों में भारतीय ज्ञान प्रणाली को प्रोत्साहन देने की बात की जा रही है, फिर भी स्पष्ट नीतिगत दिशा, वित्तीय सहयोग और संस्थागत ढाँचे का अभाव बना हुआ है। एन ओझा के अनुसार .के."नीति और क्रियान्वयन के बीच की दूरी भारतीय ज्ञान प्रणाली के पुनर्स्थापन में सबसे बड़ी बाधा है"[xv] भारतीय ज्ञान को नज़रअंदाज़ करने से सामाजिक कार्य के तरीकों की सांस्कृतिक प्रासंगिकता और असर कम हो जाता है। जब हस्तक्षेप स्थानीय मूल्यों, मान्यताओं और सामाजिक ढांचों से मेल

नहीं खाते, तो प्रैक्टिशनर्स को समुदायों से जुड़ने में मुश्किल हो सकती है। इससे सशक्तिकरण के बजाय विरोध, निर्भरता या सतही जुड़ाव हो सकता है।

उपर्युक्त बाधाएँ स्पष्ट करती हैं कि भारतीय ज्ञान प्रणाली को स्वीकार करने की समस्या केवल शैक्षणिक नहीं, बल्कि वैचारिक और संरचनात्मक भी है। जब तक औपनिवेशिक मानसिकता से मुक्ति, पाठ्यक्रम सुधार, शिक्षक प्रशिक्षण और नीतिगत समर्थन सुनिश्चित नहीं किया जाएगा, तब तक भारतीय ज्ञान प्रणाली का प्रभावी समावेशन संभव नहीं होगा। साथ ही भाषा की समस्या भी सामने आती हैज़्यादातर भारतीय ज्ञान क्षेत्रीय - भाषाओं में मौजूद है, जबकि सोशल वर्क की पढ़ाई मुख्य रूप से इंग्लिश में होती है। यह भाषाई अंतर स्थानीय ग्रंथों, मौखिक परंपराओं और सामुदायिक कहानियों तक पहुँच को सीमित करता है, जिससे स्थानीय ज्ञान और भी हाशिये पर चला जाता है।

निष्कर्ष-

प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक कार्य शिक्षा और अभ्यास में भारतीय ज्ञान को अपनाना संस्कृति के हिसाब से सही और समाज से जुड़े इंटरवेंशन डेवलप करने के लिए ज़रूरी है। हालांकि इस प्रक्रिया में कई रुकावटें आती हैं, लेकिन वे ऐसी नहीं हैं जिन्हें पार न किया जा सके। देसी ज्ञान के मूल्य को पहचानना और उसे आज के सामाजिक कार्य फ्रेमवर्क के साथ इंटीग्रेट करना इस डिसिप्लिन को बेहतर बना सकता है और भारतीय संदर्भ में सामाजिक न्याय और इंसानों की भलाई के प्रति इसकी कमिटमेंट को मज़बूत कर सकता है।

भारतीय ज्ञान प्रणाली को समाज कार्य शिक्षा और अभ्यास में स्वीकार करने की प्रक्रिया केवल शैक्षणिक सुधार का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह एक गहन वैचारिक, संरचनात्मक और नीतिगत परिवर्तन की मांग करती है। औपनिवेशिक ज्ञान संरचना के प्रभाव ने भारतीय शिक्षा व्यवस्था में पश्चिमी सिद्धांतों और मॉडलों को केंद्रीय स्थान दिया, जिसके परिणामस्वरूप भारतीय ज्ञान परंपरा को परंपरागत, अवैज्ञानिक अथवा अप्रासंगिक मानकर हाशिए पर रखा गया। यह मानसिकता आज भी पाठ्यक्रम निर्माण, शोध प्रवृत्तियों और पेशेवर अभ्यास में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से बनी हुई है।

अध्ययन यह भी दर्शाता है कि भारतीय ज्ञान प्रणाली की वैज्ञानिकता और प्रासंगिकता को लेकर व्याप्त संदेह, संदर्भ ग्रंथों और व्यावहारिक पाठ्य सामग्री का अभाव, प्रशिक्षित शिक्षकों एवं शोधकर्ताओं की कमी तथा वैश्वीकरण के दबाव ये सभी मिलकर इसके समावेशन में प्रमुख बाधाएँ उत्पन्न करते हैं। इसके साथ ही, नीति-स्तर पर स्पष्ट दिशा, संस्थागत समर्थन और प्रभावी क्रियान्वयन तंत्र का अभाव भी भारतीय ज्ञान प्रणाली को मुख्यधारा में लाने के प्रयासों को कमजोर करता है।

फिर भी यह निष्कर्ष उभरकर सामने आता है कि भारतीय ज्ञान प्रणाली समाज कार्य के मूल उद्देश्यों सेवा, करुणा, सामाजिक न्याय, सामुदायिक सहभागिता और समग्र कल्याण से गहराई से जुड़ी हुई है। स्थानीय संदर्भों, सांस्कृतिक विविधताओं और सामुदायिक जीवन की समझ के बिना समाज कार्य के हस्तक्षेप न तो प्रभावी हो सकते हैं और न ही टिकाऊ। इस दृष्टि से भारतीय ज्ञान प्रणाली समाज कार्य को अधिक मानवीय, मूल्य-संवेदी बनाने की अपार क्ष-आधारित और संदर्भमता रखती है।

अतः आवश्यक है कि समाज कार्य शिक्षा में पाठ्यक्रमों का पुनर्गठन करते हुए भारतीय ज्ञान प्रणाली को सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों स्तरों पर समाहित किया जाए। इसके लिए शिक्षक प्रशिक्षण, अंतःविषयक शोध, लोक एवं जनजातीय ज्ञान का दस्तावेजीकरण तथा नीतिनिर्माण में ठोस प्रतिबद्धता अनिवार्य है। - निष्कर्षतः, भारतीय ज्ञान प्रणाली का स्वीकार न केवल सांस्कृतिक पुनर्स्थापन की प्रक्रिया है, बल्कि यह समाज कार्य को भारतीय सामाजिक यथार्थ से जोड़कर अधिक प्रभावी और नैतिक रूप से सुदृढ़ बनाने की एक अनिवार्य शर्त भी है।

संदर्भ-

[i] राधाकृष्णन, सर्वपल्ली) .2010 .राजपाल एंड संस। पृ :नई दिल्ली .भारतीय दर्शन .(42।

[ii] देशपांडे, सतीश) .2008 ऑक्सफोर्ड :नई दिल्ली .समाज विज्ञान और भारतीय आधुनिकता .(यूनिवर्सिटी प्रेस। पृ .117।

[iii] सिंह, योगेन्द्र) .2004 .विकास पब्लिशिंग हाउस। पृ :नई दिल्ली .भारतीय समाज का समाजशास्त्र .(89।

[iv] गांधी, मोहनदास करमचंद) .2011 .नवजीवन प्रकाशन। पृ :अहमदाबाद .हिन्द स्वराज .(63।

[v] मनुस्मृति) .2009शर्मा .(, रामगोविन्द वाराण .(.सं)सी .चौखम्भा संस्कृत सीरीज़। पृ :214।

[vi] राधाकृष्णन, सर्वपल्ली. (2010). भारतीय दर्शन. नई दिल्ली: राजपाल एंड संस। पृ. 58।

[vii]राधाकृष्णन, सर्वपल्ली) .2011 .हार्पर कॉलिन्स। पृ :नई दिल्ली .एक विवेचन :भगवद्गीता .(112।
[viii] राहुल सांकृत्यायन) .2005 .बौद्ध दर्शन .(इलाहाबाद .साहित्य भवन। पृ :41।
[ix] गांधी, मोहनदास करमचंद) .2011 .नवजीवन प्रकाशन। पृ :अहमदाबाद .हिन्द स्वराज .(73।
[x] सिंह, योगेन्द्र) .2004 .विकास पब्लिशिंग हाउस। पृ :नई दिल्ली .भारतीय समाज का समाजशास्त्र .(91।
[xi]पांडे, बी) .एन .2012 .भारतीय ज्ञानपीठ। पृ :वाराणसी .भारतीय चिंतन और आधुनिकता .(64।
[xii]देशपांडे, सतीश) .2008ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस। :नई दिल्ली .समाज विज्ञान और भारतीय आधुनिकता .(.पृ119।
[xiii]वात्स्यायन, कपिला) .2010 .साहित्य अकादमी। पृ :नई दिल्ली .भारतीय ज्ञान परंपरा .(87।
[xiv]सेन, अमर्त्य) .2001 .(Development as Freedom. नई दिल्ली .ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस। पृ :23।